रूसी कहानी

मैक्सिम गोर्की

एक पाठक

एक पाठक (रूसी कहानी) : मैक्सिम गोर्की

रात काफी हो गयी थी जब मैं उस घर से विदा हुआ जहाँ मित्रों की एक गोष्ठी में अपनी प्रकाशित कहानियों में से एक का मैंने अभी पाठ किया था । उन्होंने तारीफ के पुल बांधने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी और मैं धीरे-धीरे मगन भाव से सड़क पर चल रहा था, मेरा हृदय आनंद से छलक रहा था और जीवन के एक ऐसा सुख का अनुभव मैं कर रहा था जैसा पहले कभी नहीं किया था ।

फरवरी का महीना था, रात साफ थी और खूब तारों से जड़ा मेघरहित आकाश धरती पर स्फूर्तिदायक शीतलता का संचार कर रहा था, जो नई गिरी बर्फ से सोलहों सिंगार किये हुए थी ।
'इस धरती पर लोगों की नजरों में कुछ होना अच्छा लगता है!' मैंने सोचा और मेरे भविष्य के चित्र में उजले रंग भरने में मेरी कल्पना ने कोई कोताही नहीं की ।
"हां, तुमने एक बहुत ही प्यारी-सी चीज लिखी है, इसमें कोई शक नहीं," मेरे पीछे सहसा कोई गुनगुना उठा,
मैं अचरज से चौंका और घूमकर देखने लगा,
काले कपड़े पहने एक छोटे कद का आदमी आगे बढ़कर निकट

आ गया और पैनी लघु मुस्कान के साथ मेरे चेहरे पर उसने अपनी आंखें जमा दीं, उसकी हर चीज पैनी मालूम होती थी- उसकी नजर, उसके गालों की हड्डियां, उसकी दाढ़ी जो बकरे की दाढ़ी की तरह नोकदार थी, उसका समुचा छोटा और मूरझाया-सा ढांचा, जो कुछ इतना विचित्र नोक-नुकीलापन लिये था कि आंखों में चुभता था, उसकी चाल हल्की और निःशब्द थी, ऐसा मालूम होता था जैसे वह बर्फ पर फिसल रहा हो, गोष्ठी में जो लोग मौजूद थे, उनमें वह मुझे नजर नहीं आया था ओर इसीलिए उसकी टिप्पणी ने मुझे चकित कर दिया था, वह कौन था ? और कहां से आया था ?

"क्या आपने...मतलव ...मेरी कहानी सुनी थी ? मैंने पूछा
"हां, मुझे उसे सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।"
उसकी आवाज तेज थी, उसके पतले होंठ और छोटी काली मुछें थी जो उसकी मुस्कान को नहीं छिपा पाती थीं। मुस्कान उसके होंठो से विदा होने का नाम ही नहीं लेती थी और यह मुझे बड़ा अटपटा मालूम हो रहा था ।
"अपने आपको अन्य सबसे अनोखा अनुभव करना बड़ा सुखद मालूम होता है, क्यों, ठीक है न ?" मेरे साथी ने पूछा,
मुझे इस प्रश्न में ऐसी कोई बात नहीं लगी जो असाधारण हो ,सो मुझे सहमति प्रकट करने में देर नहीं लगी ।
"हो-हो-हो!" पतली उगलियों से अपने छोटे हाथों को मलते हुए वह तीखी हंसी हंसा, उसकी हंसी मुझे अपमानित करने वाली थी ।

"तुम बड़े हंसमुख जीव मालूम होते हो," मैंने रुखी आवाज में कहा, "अरे हाँ, बहुत !" मुस्काराते और सिर हिलाते हुए उसने ताईद की, "साथ ही मैं बाल की खाल निकालने वाला भी हूं क्योंकि मैं हमेशा चीजों को जानना चाहता हूं-हर चीज को जानना चाहता हूं।"

वह फिर अपनी तीखी हंसी हँसा और वेध देने वाली अपनी काली आंखों से मेरी ओर देखता रहा, मैंने अपने कद की ऊंचाई से एक नज़र उस पर डाली और ठंडी आवाज में पूछा, "माफ करना लेकिन क्या मैं जान सकता हूँ कि मुझे किससे बातें करने का सौभाग्य ...."

"मैं कौन हूँ ? क्या तुम अनुमान नहीं लगा सकते ? जो हो, मैं फिलहाल तुम्हें आदमी का नाम उस बात से ज्यादा महत्वपूर्ण मालूम होता है जो कि वह कहने जा रहा है ?"

"निश्चय ही नहीं, लेकिन यह कुछ ... बहूत ही अजीब है," मैंने जवाब दिया ।

उसने मेरी आस्तीन पकड़ कर उसे एक हल्का-सा झटका दिया और शांत हँसी के साथ कहा, "होने दो अजीब, आदमी कभी तो जीवन की साधारण और घिसी-पिटी सीमाओं को लाँघना चाहता ही है, अगर एतराज न हो तो आओ, जरा खुलकर बातें करें, समझ लो कि मैं तुम्हारा एक पाठक हूँ-एक विचित्र प्रकार का पाठक, जो यह जानना चाहता है कि कोई पुस्तक-मिसाल के लिए तुम्हारी अपनी लिखी हुई पुस्तकें-कैसे और किस उद्देश्य के लिए लिखी गयी है, बोलो, इस तरह की बातचीत पसंद

करोगे ?"

"ओह, जरुर !" मैंने कहा, "मुझे खुशी होगी, ऐसे आदमी से बात करने का अवसर रोज-रोज नहीं मिलता," लेकिन मैंने यह झूठ कहा था, क्योंकि मुझे यह सब बेहद नागवार मालूम हो रहा था, फिर भी मैं उसके साथ चलता रहा-धीमे कदमों से, शिष्टाचार की ऐसी मुद्रा बनाये, मानो मैं उसकी बात ध्यान से सून रहा हूँ ।

मेरा साथी क्षण भर के लिए चुप हो गया और फिर बड़े विश्वासपूर्ण स्वर में उसने कहा, "मानवीय व्यवहार में निहित उद्देश्यों और इरादों से ज्यादा विचित्र और महत्वपूर्ण चीज इस दुनिया में और कोई नहीं है, तुम यह मानते हो न ?" मैने सिर हिलाकर हामी भरी ।

"ठीक, तब आओ, जरा खुलकर बातें करें, सुनो, तुम जब तक जवान हो तब तक खुलकर बात करने का एक भी अवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहिए ।"

'अजीब आदमी है!' मैंने सोचा, लेकिन उसके शब्दों ने मुझे उलझा लिया था ।

"सो तो ठीक है," मैंने मुस्कराते हुए कहा, "लेकिन हम बातें किस चीज के बारे में करेंगे ?

पुराने परिचित की भांति उसने घनिष्ठता से मेरी आँखों में देखा और कहा, "साहित्य के उद्देश्यों के बारे में, क्यों, ठीक है न ?"

"हाँ मगर....देर काफी हो गया है...."

"ओह, तुम अभी नौजवान हो, तुम्हारे लिए अभी देर नहीं हुई ।"

मैं ठिठक गया, उसके शब्दों ने मुझे स्तब्ध कर दिया था । किसी और ही अर्थ में उसने इन शब्दों का उच्चारण किया था और इतनी गंभीरता से किया था कि वे भविष्य का उदघोष मालूम होते थे । मैं ठिठक गया था, लेकिन उसनें मेरी बांह पकड़ी और चुपचाप किंतु दृढ़ता के साथ आगे बढ़ चला ।

"रुको नहीं, मेरे साथ तुम सही रास्ते पर हो" उसने कहा, "बात शुरु करो, तुम मुझे यह बताओ कि साहित्य का उद्देश्य क्या है ?" मेरा अचरज बढ़ता जा रहा था और आत्मसंतुलन घटना जा रहा था । आखिर यह आदमी मुझसे चाहता क्या है? और यह है कौन ? निस्संदेह वह एक दिलचस्प आदमी था, लेकिन मैं उससे खीज उठा था । उससे पिंड छुड़ाने की एक और कोशिश करते हुए जरा तेजी से आगे की ओर लपका, लेकिन वह भी पीछे न रहा, साथ चलते हुए शांत भाव से बोला, "मैं तुम्हारी दिक्कत समझ सकता हूँ, एकाएक साहित्य के उद्देश्य की व्याख्या करना तुम्हारे लिए कठिन है, कही तो मैं कोशिश करुँ?"

उसने मुस्कराते हुए मेरी ओर देखा लेकिन मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना कहने लगा, "शायद बात-बात से तुम सहमत होगे अगर मैं कहू कि साहित्य का उद्देश्य है-खुद अपने को जानने में इंसान की मदद करना, उसके आत्मविश्वास को दृढ़ बनाना और उसके सत्यान्वेषण को सहारा देना, लोगों की अच्छाईयों का उद्-घाटन करना और सौंदर्य की पवित्र भावना से उनके जीवन को शुभ बनाना, क्यों, इतना तो मानते हो ?"
"हाँ," मैंने कहा, "कमोबेश यह सही है, यह तो सभी मानते है

कि साहित्य का उद्देश्य लोगों को और अच्छा बनाना है।"
"तब देखो न, लेखक के रुप में तुम कितने ऊँचे उद्देश्य के लिए काम करते हो ! "मेरे साथी ने गंभीरता के साथ अपनी बात पर जोर देते हुए कहा और फिर अपनी वही तीखी हँसी हँसने लगा, "हो-हो-हो !"
यह मुझे बड़ा अपमानजनक लगा। मैं दुख और खीज से चीख उठा, "आखिर तुम मुझसे क्या चाहते हो ?"
"आओ, थोड़ी देर बाग में चलकर बैठते हैं।" उसने फिर एक हल्की हँसी हँसते हुए और मेरा हाथ पकड़ कर मुझे खींचते हुए कहा।

उस समय हम नगर-बाग की एक वीथिका में थे । चारों ओर बबूल और लिलक की नंगी टहनियाँ दिखायी दे रही थीं, जिन पर वर्फ की परत चढ़ी हुई थी । वे चांद की रोशनी में चमचमाती मेरे सिर के ऊपर भी छाई हुई थीं औऱ ऐसा मालूम होता था जैसे वर्फ का कवच पहने ये सख्त टहनियाँ मेरे सीने को बेध कर सीधे मेरे हृदय तक पहुंच गयी हों।
मैंने बिना एक शब्द कहे अपने साथी की ओर देखा, उसके व्यवहार ने मूझे चक्कर में डाल दिया था। 'इसके दिमाग का कोई पूर्जा ढीला मालूम होता है।' मैंने सोचा औऱ इसके व्यवहार की इस व्याख्या से अपने मन को संतोष देने की कोशिश की।
"शायद तुम्हारा खवाल है कि मेरा दिमाग कुछ चल गया है" उसने जैसे मेरे भावों को ताड़ते हुए कहा। "लेकिन ऐसे खयाल को अपने दिमाग से निकाल दो यह तुम्हारे लिए नुकसानदेह और

अशोभन है.... बजाय इसके कि हम उस आदमी को समझने की कोशिश करें, जो हमसे भिन्न है। इस बहाने की ओट लेकर हम उसे समझने के झंझट से छुट्टी पा जाना चाहते हैं । मनुष्य के प्रति मनुष्य की दुखद उदासीनता का यह एक बहुत ही पुष्ट प्रमाण है।"

"ओह ठीक है," मैंने कहा । मेरी खीज बराबर बढ़ती ही जा रही थी, "लेकिन माफ करना, मैं अब चलूँगा, काफी समय हो गया।"

"जाओ अपने कंधों को बिचकाते हुए उसने कहा। "जाओ, लेकिन यह जान लो कि तुम खुद अपने से भाग रहे हो।" उसने मेरा हाथ छोड़ दिया और मैं वहाँ से चल दिया।

वह बाग में ही टीले पर रुक गया। वहा से वोल्गा नज़र आती थी जो अब बर्फ की चादर ताने थी और ऐसा मालूम होता था जैसे बर्फ की उस चादर पर सड़कों के काले फीते टंके हों, सामने दूर तट के निस्तब्ध और उदासी में डूबे विस्तृत मैदान फैले थे। वह वहीं पड़ी हुई एक बैंच पर बैठ गया और सूने मैदानों की ओर ताकता हुआ सीटी की आवाज़ में एक परिचित गीत की धुन गुनगुननाने लगा।

वो क्या दिखायेंगे राह हमको
जिन्हें खुद अपनी ख़बर नहीं

मैंने घुमकर उसकी ओर देखा अपनी कुहनी को घुटने पर और ठोडी की हथेली पर टिकाये, मुँह से सीटी बजाता, वह मेरी ही ओर नज़र जमाये हुए था और चांदनी से चमकते उसने चेहरे पर

उसकी नन्हीं काली मूंछें फड़क रही थीं। यह समझकर कि यही विधि का विधान है, मैंने उसके पास लौटने का निश्चय कर लिया। तेज कदमों से मैं वहां पहुँचा और उसके बराबर में वैठ गया।

"देखो, अगर हमें बात करनी है तो सीध-सादे ढंग से करनी चाहिए," मैने आवेशपूर्वक लेकिन स्वयं को संयत रखते हुए कहा।

"लोगों को हमेशा ही सीधे-सादे ढंग से बात करनी चाहिए।" उसने सिर हिलाते हुए स्वीकार किया, "लेकिन यह तुम्हें भी मानना पड़ेगा कि अपने उस ढंग से काम लिये बिना मैं तुम्हारा ध्यान आकर्षित नहीं कर सकता था। आजकल सीधी-सादी और साफ बातों को नीरस और रूखी कहकर नज़रअंदाज कर दिया जाता है। लेकिन असल बात यह है कि हम खुद ठंडे और कठोर हो गये हैं और इसीलिए हम किसी भी चीज में जोश या कोमलता लाने में असमर्थ रहते हैं । हम तुच्छ कल्पनाओं और दिवास्तप्नों में रमना तथा अपने आपको कुछ विचित्र और अनोखा जताना चाहते हैं, क्योंकि जिस जीवन की हमने रचना की है, वह नीरस, बेरंग और उबाऊ है, जिस जीवन को हम कभी इतनी लगन और आवेश के साथ बदलने चले थे, उसने हमें कुचल और तोड़ डाला है "एक पल चुप रहकर उसने पूछा," क्यों, मैं ठीक कहता हूं न ?"

"हाँ," मैंने कहा, "तुम्हारा कहना ठीक है,"

"तुम बड़ी जल्दी घुटने टेक देते हो!" ़तीखी हँसी हँसते हुए मेरे

प्रतिवादी न मेरा मखौल उडाया। मैं पस्त हो गया। उसने अपनी पैनी नज़र मुझ-पर जमा दी और मुस्कराता हुआ बोला, "तुम जो लिखते हो उसे हजारों लोग पढ़ते हैं। तुम किस चीज का प्रचार करते हो ? और क्या तुमने कभी अपने से यह पूछा है कि दूसरों को सीख देने का तुम्हें क्या अधिकार है ?"

जीवन में पहली बार मैंने अपनी आत्मा को टटोला, उसे जांचा-परखा। हाँ, तो मैं किस चीज का प्रचार करता हूँ ? लोगों से कहने के लिए मेरे पास क्या है ? क्या वे ही सब चीजें, जिन्हें हमेशा कहा-सुना जाता है, लेकिन जो आदमी को बदल कर बेहतर नहीं बनातीं ? और उन विचारों तथा नीतिवचनों का प्रचार करने का मुझे क्या हक है, जिनमें न तो मैं यकीन करता हूँ और न जिन्हें मैं लाता हूँ ? जब मैंने खुद उनके खिलाफ आचरण किया, तब क्या यह सिद्ध नहीं होता कि उनकी सच्चाई में मेरा विश्वास नहीं है ? इस आदमी को मैं क्या जवाब दूँ जो मेरी बगल में बैठा है ?

लेकिन उसने, मेरे जवाब की प्रतीक्षा से ऊब कर, फिर बोलना शुरु कर दिया, "एक समय था जब यह धरती लेखन-कला विशारदों, जीवन और मानव-हृदय के अध्येताओं और ऐसे लोगों से आबाद थी जो दुनिया को अच्छा बनाने की सर्वप्रबल आकांक्षा एवं मानव-प्रकृति में गहरे विश्वास से अनुप्राणित थे, उन्होंने ऐसी पुस्तकें लिखीं जो कभी विस्मृति के गर्भ में विलीन नहीं होंगी, कारण, वे अमर सच्चाइयों को अंकित करती हैं और उनके पन्नों से कभी मलिन न होने वाला सौंदर्य प्रस्फुटित होता

है । उनमें चित्रित पात्र जीवन के सच्चे पात्र हैं, क्योंकि प्रेरणा ने उनमें जान फूंकी है, उन पुस्तकों में साहस है, दहकता हुआ गुस्सा और उन्मुक्त सच्चा प्रेम है, और उनमें एक भी शब्द भरती का नहीं है ।

"तुमने, मैं जानता हूं, ऐसी ही पुस्तकों से अपनी आत्मा के लिए पोषण ग्रहण किया है, फिर भी तुम्हारी आत्मा उसे पचा नहीं सकी, सत्य और प्रेम के बारे में तुम जो लिखते हो, वह झूठा और अनुभूतिशून्य प्रतीत होता है, लगता है, जैसे शब्द जबरदस्ती मुँह से निकाले जा रहे हों, चंद्रमा की तरह तुम दूसरे की रोशनी से चमकते हो, और यह रोशनी भी बुरी तरह मलिन है-वह परछाइयाँ खूब डालती है, लेकिन आलोक कम देती है और गरमी तो उसमें जरा भी नहीं हैं ।

"असल में तुम खुद गरीब हो, इतने कि दूसरों को ऐसी कोई चीज नहीं दे सकते जो वस्तुतः मूल्यवान हो, और जब देते भी हो तो सर्वोच्च संतोष की इस सजग अनुभूति के साथ नहीं कि तुमने सुंदर विचारों और शब्दों की निधि में वृद्धि करके जीवन को संपन्न बनाया है, तुम केवल इसलिए देते हो कि जीवन से और लोगों से अधिकाधिक ले सको, तुम इतने दरिद्र हो कि उपहार नही दे सकते, या तुम सूदखोर हो और अनुभव के टुकड़ों का लेनदेन करते हो, ताकि तुम ख्याति के रूप में सूद बटोर सको ।

"तुम्हारी लेखनी चीजों की सतह को ही खरोंचती है । जीवन की तुच्छ परिस्थितियों को ही तुम निरर्थक ढंग से कोंचते-कुरेदते रहते हो । तुम साधारण लोगों के साधारण भावों का वर्णन करते

रहते हो, हो सकता है, इससे तुम उन्हें अनेक साधारण-महत्वहीन-सच्चाइयां सिखाते हो, लेकिन क्या तुम कोई ऐसी रचना भी कर सकते हो जो मनुष्य की आत्मा को ऊँचा उठाने की क्षमता रखती हो ? नहीं ! तो क्या तुम सचमुच इसे इतना महृतवपूर्ण समझते हो कि हर जगह पड़े हुए कूड़े के ढेरों को कुरेदा जाये और यह सिद्ध किया जाये कि मनुष्य बुरा है, मूर्ख है, आत्मसम्मान की भावना से बेखबर है, परिस्थितियों का गुलाम है, पूर्णतया और हमेशा के लिए कमजोर, दयनीय और अकेला हैं ?

"अगर तुम पूछो तो मनुष्य के बारे में ऐसा घृणित प्रचार मानवता के शत्रु करते हैं-और दुख की बात यह है कि वे मनुष्य के हृदय में यह विश्वास जमाने में सफल भी हो चुके हैं, तुम ही देखो, मानव-मस्तिष्क आज कितना ठस हो गया है और उसकी आत्मा के तार कितने बेआवाज़ हो गये हैं, यह कोई अचरज की बात नहीं है, वह अपने आपको उसी रुप में देखता है जैसा कि वह पुस्तकों में दिखाया जाता है......

"और पुस्तकें-खास तौर से प्रतिभा का भ्रम पैदा करने वाली वाक्-चपलता से लिखी गयी पुस्तकें-पाठकों को हतबुद्धि करके एक हद तक उन्हें अपने वश में कर लेती हैं, अगर उनमें मनुष्य को कमजोर, दयनीय, अकेला दिखाया गया है तो पाठक उनमें अपने को देखते समय अपना भोंडापन तो देखता है, लेकिन उसे यह नज़र नहीं आता कि उसके सुधार की भी कोई संभावना हो सकती है । क्या तुममें इस संभावना को उभारकर रखने की

क्षमता है ? लेकिन यह तुम कैसे कर सकते हो, जबकि तुम खुद ही.... जाने दो, मैं तुम्हारी भावनाओं को चोट नहीं पहुँचाऊंगा, क्योंकि मेरी बात काटने या अपने को यही ठहराने की कोशिश किये बिना तुम मेरी बात सून रहे हो ।

"तुम अपने आपको मसीहा के रूप में देखते हो, समझते हो कि बुराइयों को खोल कर रखने के लिए खुद ईश्वर ने तुम्हें इस दुनिया में भेजा है, ताकि अच्छाइयों की विजय हो, लेकिन बुराइयों को अच्छाइयों से छांटते समय क्या तुमने यह नहीं देखा कि ये दोनों एक-दूसरो से गुंथी हुई हैं और इन्हें अलग नहीं किया जा सकता? मुझे तो इसमें भी भारी संदेह है कि खुदा ने तुम्हें अपना मसीहा बना कर भेजा है । अगर वह भेजता तो तुमसे ज्यादा मजबूत इंसानों को इस काम के लिए चुनता, उनके हृदयों में जीवन, सत्य और लोगों के प्रति गहरे प्रेम की जोत जगाता ताकि वे अंधकार में उसके गौरव और शक्ति का उद्घोष करने वाली मशालों की भांति आलोक फैलायें, तुम लोग तो शैतान की मोहर दागने वाली छड़ की तरह धुआं देते हो, और यह धुआँ लोगों को आत्मविश्वासहीनता के भावों से भर देता है । इसलिय तुमने और तुम्हारी जाति के अन्य लोगों ने जो कुछ भी लिखा है, उस सबका एक सचेत पाठक, मैं तुमसे पूछता हूँ-तुम क्यों लिखते हो? तुम्हारी कृतियाँ कुछ नहीं सिखातीं और पाठक सिवा तुम्हारे किसी चीज पर लज्जा अनुभव नहीं करता, उनकी हर चीज आम-साधारण है, आम-साधारण लोग, आम साधारण विचार, आम-साधारण घटनाएं ! आत्मा के विद्रोह और आत्मा

के पुनर्जागरण के बारे में तुम लोग कब बोलना शुरू करोगे ? तुम्हारे लेखन में रचनात्मक जीवन की वह ललकार कहाँ है, वीरत्व के दृष्टांत और प्रोत्साहन के वे शब्द कहाँ हैं, जिन्हें सुनकर आत्मा आकाश की ऊंचाइयों को छूती है ?

"शायद तुम कहो- 'जो कुछ हम पेश करते हैं, उसके सिवा जीवन में अन्य नमूने मिलते कहाँ है ?'

न, ऐसी बात मुँह से न निकालना, यह लज्जा और अपमान की बात है कि वह, जिसे भगवान ने लिखने की शक्ति प्रदान की है । जीवन के सम्मुख अपनी पंगुता और उससे ऊपर उठने में अपनी असमर्थता को स्वीकार करे, अगर तुम्हारा स्तर भी वही है, जो आम जीवन का, अगर तुम्हारी कल्पना ऐसे नमूनों की रचना नहीं कर सकती जो जीवन में मौजूद न रहते हुए भी उसे सुधारने के लिए अत्यंत आवश्यक हैं, तब तुम्हारा कृतित्व किस मर्ज की दवा है ? तब तुम्हारे धंधे की क्या सार्थकता रह जाती है?

"लोगों के दिमागों को उनके घटनाविहीन जीवन के फोटोग्राफिक चित्रों का गोदाम बनाते समय अपने हृदय पर हाथ रखकर पूछो कि ऐसा करके क्या तुम नुकसान नहीं पहुँचा रहे हो ? कारण- और तुम्हें अब यह तुरंत स्वीकार कर लेना चाहिए-कि तुम जीवन का ऐसा चित्र पेश करने का ढंग, नहीं जानते जो लज्जा की एक प्रतिशोधपूर्ण चेतना को जन्म दे, जीवन के नए जीवन के स्पंदन को तीव्र और उसमें स्फूर्ति का संचार करना चाहते हो, जैसा कि अन्य लोग कर चुके हैं?"

मेरा विचित्र साथी रुक गया और मैं, बिना कुछ बोले, उसके

शब्दों पर सोचता रहा, थोड़ी देर बाद उसने फिर कहा, "एक बात और, क्या तुम ऐसी आह्लादपूर्ण हास्य-रचना कर सकते हो,जो आत्मा का सारा मैल धो डाले ? देखो न, लोग एकदम भूल गये हैं कि ठीक ढंग से कैसे हँसा जाता है ! वे कुत्सा से हँसते हैं, वे कमीनपन से हँसते हैं, वे अक्सर अपने आँसुओं की बेधकर हँसते हैं, वे हृदय के उस समूच उल्लास से कभी नहीं हँसते जिससे वयस्कों के पेट में बल पड़ जाते हैं, पसलियां बोलने लगती हैं, अच्छी हंसी एक स्वास्थ्यप्रद चीज है । यह अत्यंत आवश्यक है कि लोग हमें, आखिर हँसने की क्षमता उन गिनी-चुनी चीजों में से एक है, जो मनुष्य को पशु से अलग करती हैं, क्या तुम निदा की हँसी के अवाला अन्य किसी प्रकार की हँसी को भी जन्म दे सकते हो ? निंदा की हंसीँ तो बाजारू हँसी है, जो मानव जीवधारियों को केवल हँसी का पात्र बनाती है कि उसकी स्थिति दयनीय है ।

"तुम्हें अपने हृदय में मनुष्य की कमजोरियों के लिए महान घृणा का और मनुष्य के लिए महान प्रेम का पोषण करना चाहिए, तभी तुम लोगों को सीख देने के अधिकारी बन सकोगे, अगर तुम घृणा और प्रेम, दोनों में से किसी का अनुभव नहीं कर सकते, तो सिर नीचा रखो और कुछ कहने से पहले सौ बार सोचो"

सुबह की सफेदी अब फूट चली थी, लेकिन मेरे हृदय में अंधेरे गहरा रहा था, यह आदमी, जो मेरे अंतर के सभी भेदों से वाकिफ था, अब भी बोल रहा था ।

"सब कुछ के बावजूद जीवन पहले से अधिक प्रशस्त और

अधिक गहरा होता जा रहा है, लेकिन यह बहुत धीमी गति से हो रहा है, क्योंकि तुम्हारे पास इस गति को तेज़ बनाने के लायक न तो शक्ति है, न ज्ञान, जीवन आगे बढ़ रहा है और लोग दिन पर दिन अधिक और अधिक जानना चाहते हैं । उनके सवालों के जवाब कौन दें ? यह तुम्हारा काम है लेकिन क्या तुम जीवन में इतने गहरे पैठे हो कि उसे दूसरों के सामने खोल कर रख सको ? क्या तुम जानते हो कि समय की मांग क्या है ? क्या तुम्हें भविष्य की जानकारी है और क्या तुम अपने शब्दों से उस आदमी में नई जान फूंक सकते हो जिसे जीवन की नीचता ने भ्रष्ट और निराश कर दिया है ?"

यह कहकर वह चुप हो गया । मैंने उसकी ओर नहीं देखा. याद नहीं कौन-सा भाव मेरे हृदय में छाया हुआ था-शर्म का अथवा डर का । मैं कुछ बोल भी नहीं सका ।

"तुम कुछ जवाब नहीं देते?" उसी ने फिर कहा, "खैर, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, मैं तुम्हारे मन की हालत समझ सकता हूँ अच्छा, तो अब मैं चला."

"इतनी जल्दी ?" मैने धीमी आवाज़ में कहा. कारण, मैंउ ससे चाहे जितना भयभीत रहा होऊँ, लेकिन उससे भी अधिक मैं अपने आपसे डर रहा था.

"हाँ, मैं जा रहा हूँ. लेकिन मैं फिर आऊँगा. मेरी प्रतीक्षा करना ।"

और वह चला गया । लेकिन क्या वह सचमुच चला गया ? मैंने उसे जाते हुए नहीं देखा । वह इतनी तेजी से और खामोशी से

गायब हो गया जैसे छाया। मैं वहीं बाग में बैठा रहा- जाने कितनी देर तक-और न मुझे ठंड का पता था, न इस बात का कि सूरज उग आया है और पेड़ों की बर्फ से ढंकी टहनियों पर चमक रहा है।

(अनुवाद - अनिल जनविजय)